कबीरदास के साहित्य में अभिव्यक्त दार्शनिक विचारों की प्रासंगिकता

ए. वी. सूर्यवंशी*

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.21438836

ABSTRACT

यह आलेख संत कबीरदास के साहित्य और दर्शन की सार्वकालिक महत्व का विश्लेषण करता है। पंद्रहवीं शताब्दी के भक्ति आंदोलन के निर्गुण पंथ के प्रमुख स्तंभ कबीर ने सामाजिक कुरीतियों, धार्मिक पाखंड और जातीय भेदभाव पर अपनी 'आँखिन की देखी' अर्थात् अनुभवजन्य सत्य के आधार पर प्रहार किया। यह आलेख स्थापित करता है कि कबीर का दर्शन मनुष्य की आंतरिक स्वाधीनता, सामाजिक समता और कर्म-आधारित श्रेष्ठता पर बल देता है। उनका सहज मार्ग किसी बाहरी आडंबर के बजाय हृदय की शुद्धता को महत्व देता है, जो आज के विभाजित समाज के लिए अत्यंत प्रासंगिक है। कबीर केवल एक मध्ययुगीन कवि नहीं, बल्कि एक सार्वभौमिक विचारक हैं, जिनकी शिक्षाएं आज भी अन्याय और अज्ञान के विरुद्ध एक सशक्त मार्गदर्शक के रूप में कार्य करती हैं।

KEYWORDS: कबीरदास, साहित्य, दर्शन, प्रासंगिकता, कबीर के विचार, सामाजिक चिंतन।

* **डॉ. ए. वी. सूर्यवंशी,** प्राचार्य, बी.एल.डी.ई. संस्था, बसवेश्वर कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, बसवन बागेवाड़ी.

दर्शन ज्ञान की वह शाखा है जो जीवन, अस्तित्व और वास्तविकता जैसे मौलिक प्रश्नों की तर्कपूर्ण खोज करती है। संस्कृत के 'दृश्' धातु से जन्मे इस शब्द का अर्थ केवल आँखों से देखना नहीं, बल्कि विवेक से सत्य का साक्षात्कार करना है। यह तर्क और चिंतन द्वारा परम सत्य की खोज करने, एक विवेकपूर्ण जीवन-दृष्टि विकसित करने और नैतिक सिद्धांतों को स्थापित करने का एक बौद्धिक प्रयास है। भारतीय दर्शन में सांख्य व योग और पश्चिमी दर्शन में सुकरात व प्लेटो इसके प्रमुख उदाहरण हैं। दर्शन बुद्धि को चुनौती देकर सत्य की खोज के लिए प्रेरित करता है। इसी कसौटी पर जब हम कबीर के साहित्य को परखते हैं, तो यह पाते हैं कि वे हर युग के संकटों और विमर्शों में एक अनिवार्य संदर्भ बिंदु के रूप में उपस्थित हो जाते हैं। कबीर की वाणी हर युग में मनुष्य की "स्वाधीनता" या स्वतंत्रता की पक्षधर रही है-चाहे वह धार्मिक कर्मकांडों से स्वतंत्रता हो, सामाजिक रूढ़ियों से स्वतंत्रता हो, या फिर मानसिक गुलामियों से स्वतंत्रता हो। इस कारण कबीर आज भी प्रासंगिक हैं। कबीरदास ने अपने विचार इस प्रकार प्रकट किए कि दर्शनशास्त्र को ही समृद्ध कर दिया-

"कहना था जो कह चले, अब कुछ कहा न जाय।
एक रहा दूजा गया, दरिया लहर समाय॥"1

मध्ययुगीन भारत के ऐतिहासिक पटल पर भक्ति आंदोलन का उदय एक साधारण घटना नहीं, बल्कि एक महान सांस्कृतिक क्रांति थी। यह एक ऐसा दौर था जब समाज, राजनीति और धर्म की स्थापित संरचनाएं जटिल और कई बार दमनकारी हो चुकी थीं। इसी युग की सबसे महत्वपूर्ण देन के रूप में संत काव्य का सृजन हुआ, जिसने साहित्य और संवेदना को एक नई दिशा दी। लगभग तीन सौ वर्षों के विस्तृत कालखंड में फैले भक्ति आंदोलन ने अनेक अंतर्धाराओं को जन्म दिया, जिनमें से निर्गुण भक्ति की धारा का अपना एक विशिष्ट और क्रांतिकारी महत्व है। इसी निर्गुण पंथ के सबसे प्रखर, तेजस्वी और आधार स्तंभ के रूप में संत कबीरदास स्थापित हुए। कबीर केवल एक कवि नहीं, बल्कि एक समाज सुधारक, एक दार्शनिक और एक ऐसे युगदृष्टा थे, जिनकी वाणी ने सदियों के असमानता और बंधनों को लांघकर आज भी अपने महत्व को बनाए रखा है। उनके काव्य की यह चिरस्थायी विशेषता उनके जीवन के अनुभवों, उनकी सामाजिक चेतना और उनके द्वारा प्रतिपादित सहज मार्ग में निहित है।

पंद्रहवीं शताब्दी के भारत में, जब समाज धार्मिक कट्टरता, जातिगत भेदभाव और सामाजिक रूढ़ियों की जंजीरों में जकड़ा हुआ था, काशी की धरती पर एक ऐसे युगपुरुष का जन्म हुआ, जिसने अपनी वाणी के तेज से इन सभी जंजीरों पर प्रहार किया। वे थे संत कबीरदास। कबीर केवल एक कवि नहीं, बल्कि एक महान समाज सुधारक, एक निर्भीक आलोचक और एक ऐसे आध्यात्मिक विचारक थे, जिनका जन्म और जीवन स्वयं में सामाजिक समरसता का प्रतीक बन गया। एक जुलाहा परिवार में पले-बढ़े कबीर ने औपचारिक

शिक्षा तो प्राप्त नहीं की, लेकिन उन्होंने जीवन और समाज की पाठशाला से जो ज्ञान अर्जित किया, उसे अपनी 'साखी', 'सबद' और 'रमैनी' के माध्यम से ऐसी प्रखरता से व्यक्त किया कि उनकी आवाज़ सदियों बाद भी उतनी ही शक्तिशाली बनी हुई है।

"जागो लोगों मत सुवो, ना करू नींद से प्यार।
जैसा सपना रैन का, ऐसा यह संसार॥"2

कबीर द्वारा प्रवर्तित निर्गुण पंथ, भक्ति के पारंपरिक और कर्मकांडीय स्वरूपों से इतर, एक सहज भक्ति मार्ग को प्रशस्त करता था। यह सहजता ही उनकी सबसे बड़ी शक्ति थी। वे समाज के उस हाशिए पर खड़े वर्ग का प्रतिनिधित्व करते थे, जो सदियों से उपेक्षित, शोषित, बहिष्कृत और औपचारिक शिक्षा से वंचित रहा था। उनका परिचय एक ऐसे अशिक्षित और शास्त्र-ज्ञान से रहित व्यक्ति के रूप में दिया जाता है, जो तथाकथित ज्ञानी समाज की परिभाषाओं में फिट नहीं बैठता। परंतु, इसी के साथ वे एक "संस्कारवान रचनाकार" थे, जिनकी नैतिकता और मानवीय मूल्य किसी भी शास्त्र से कहीं अधिक गहरे और सच्चे थे। उनका संबंध सीधे तौर पर श्रमिक वर्ग से था, एक ऐसा वर्ग जो जीवन को किताबों से नहीं, बल्कि अपने श्रम, अपने पसीने और अपनी आँखों से अर्जित अनुभवों से सीखता है। यही वर्गीय चेतना और भोगा हुआ यथार्थ उनके काव्य का मूल आधार बना।

कबीर का व्यक्तित्व और कृतित्व उन "विषम परिस्थितियों" की देन है, जिनमें वे जिए और संघर्षरत रहे। इतिहास की उन विषम परिस्थितियों ने ही उनके चरित्र को गढ़ा और उसे फौलादी बनाया। समाज में व्याप्त धार्मिक पाखंड, जातीय भेदभाव, ऊंच-नीच की भावना और सामाजिक विसंगतियों से उनकी निरंतर लड़ाई ने ही उनकी वाणी को वह असाधारण जीवंतता और ओजस्विता प्रदान की, जो आज भी पाठकों और श्रोताओं को सीधे संबोधित करती है। वे किताबी ज्ञान या सुनी-सुनाई बातों पर विश्वास करने वाले संत नहीं थे। उनका सत्य, अनुभव की कसौटी पर कसा हुआ खरा सोना था। इसी आत्मविश्वास और प्रामाणिकता की घोषणा वे अपने इस प्रसिद्ध कथन में करते हैं,

"मैं कहता हौं आँखिन की देखी, तू कहता कागद की लेखी।"

यह एक पंक्ति मात्र नहीं, बल्कि कबीर के संपूर्ण दर्शन का सार है। यह पोथियों में लिखे ज्ञान (कागद की लेखी) पर आँखों देखे सत्य (आँखिन की देखी) की विजय का उद्घोष है। यह अनुभवजन्य ज्ञान को सैद्धांतिक ज्ञान से ऊपर स्थापित करने का एक साहसिक प्रयास था। यही एक कारण है कि लगभग छह सौ वर्ष पूर्व रची गई उनकी वाणियों को आज भी इतना जीवंत बनाए रखा है।

कबीर के दर्शन का पहला और सबसे महत्वपूर्ण आयाम है, उनका पाखंड और आडंबर पर किया गया निर्मम प्रहार। उन्होंने हिंदू और मुसलमान दोनों ही धर्मों में व्याप्त कर्मकांडों, बाहरी दिखावों और कट्टरता की समान रूप से आलोचना की। उनका सहज भक्ति मार्ग किसी मंदिर या मस्जिद का मोहताज

नहीं था। वह हृदय की शुद्धता और आंतरिक साधना पर बल देते हैं। आज के युग में जब धर्म के नाम पर नफरत और विभाजन की राजनीति अपने चरम पर है, तब कबीर का यह कहना कि ईश्वर न मंदिर में है, न मस्जिद में, बल्कि हर प्राणी की सांस में है, पहले से कहीं अधिक प्रासंगिक हो जाता है। उनकी शिक्षाएं धार्मिक सहिष्णुता और सर्वधर्म समभाव का एक शाश्वत संदेश देती हैं, जो वर्तमान वैश्विक परिदृश्य के लिए एक अनिवार्य आवश्यकता है।

उनके दर्शन का दूसरा पहलू उनकी गहरी सामाजिक चेतना में निहित है। वे एक "शोषित" और "बहिष्कृत" समुदाय से आए थे और उन्होंने जातीय भेदभाव के दंश को स्वयं झेला था। इसलिए, उनकी वाणी में इस सामाजिक अन्याय के विरुद्ध एक स्वाभाविक विद्रोह का स्वर है। उन्होंने जन्म के आधार पर किसी को श्रेष्ठ या निम्न मानने की अवधारणा को सीधा सीधा खारिज कर दिया। उनका संदेश था कि मनुष्य की पहचान उसके कर्मों से होती है, न कि उसकी जाति या कुल से। आज भी भारतीय समाज जब जातिगत भेदभाव, छुआछूत और आरक्षण जैसे जटिल प्रश्नों से जूझ रहा है, तब कबीर एक ऐसे प्रकाश स्तंभ के रूप में दिखाई देते हैं जो हमें एक समतामूलक और न्यायपूर्ण समाज बनाने की प्रेरणा देते हैं। उनका जीवन स्वयं इस बात का प्रमाण है कि ज्ञान और प्रतिभा किसी जाति या वर्ग की जागीर नहीं है। एक "अशिक्षित" और "श्रमिक वर्ग" से आने के बावजूद उन्होंने ज्ञान और विवेक की जो ऊँचाइयां छुईं, वह आज भी करोड़ों वंचितों और शोषितों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।

कबीर के दर्शन का तीसरा आधार उनका अनुभवजन्य सत्य या "आँखिन की देखी" पर अटूट विश्वास है। वे हमें आँखें मूंदकर किसी भी शास्त्र, गुरु या परंपरा को स्वीकार करने से रोकते हैं। वे तर्क, विवेक और अनुभव की कसौटी पर हर बात को कसने का आग्रह करते हैं। आज के सूचना क्रांति के युग में, जब हम फेक न्यूज, दुष्प्रचार और सूचनाओं के अंबार से घिरे हैं, कबीर का यह संदेश और भी महत्वपूर्ण हो जाता है। वे हमें एक जागरूक और विवेकी नागरिक बनने के लिए प्रेरित करते हैं, जो सुनी-सुनाई बातों ("कागद की लेखी") पर नहीं, बल्कि स्वयं के अनुभव और विश्लेषण पर विश्वास करे। यह वैज्ञानिक दृष्टिकोण और आलोचनात्मक चिंतन की वह नींव है, जिसकी आज समाज को सर्वाधिक आवश्यकता है।

कबीर के दर्शन इस तथ्य में निहित है कि वे मनुष्य की आंतरिक "स्वाधीनता" के सबसे बड़े पैरोकार हैं। वे हमें लोभ, मोह, अहंकार और भय जैसी मानसिक कमजोरियों से मुक्त होने का मार्ग दिखाते हैं। उनका सहज भक्ति मार्ग वास्तव में आत्म-साक्षात्कार का मार्ग है, जो व्यक्ति को बाहरी बंधनों से पहले भीतरी बंधनों से आजाद करता है। एक ऐसा व्यक्ति जो आंतरिक रूप से स्वतंत्र है, वही बाहरी दुनिया में व्याप्त अन्याय और शोषण का निर्भीकता से सामना कर सकता है। कबीर का व्यक्तित्व, जो इतिहास की "विषम परिस्थितियों" से तपकर बना था, इसी निर्भीकता और आंतरिक स्वतंत्रता का

प्रतीक है। उनकी वाणी में जो "जीवंतता" है, वह इसी आत्मिक बल से उपजी है। वे कहते हैं-

"सुमरण से मन लाइए, जैसे पानी बिन मीन।
प्राण तजे बिन बिछड़े, संत कबीर कह दीन॥"3

निष्कर्षतः यह स्पष्ट है कि कबीरदास केवल मध्ययुग के एक कवि नहीं, बल्कि एक सार्वकालिक और सार्वभौमिक विचारक हैं। उनका साहित्य दर्शन छह सौ वर्षों के बाद भी इसलिए प्रासंगिक है, क्योंकि यह उन बुनियादी मानवीय मूल्यों और सच्चाइयों पर आधारित है जो देश, काल और समाज की सीमाओं से परे हैं। जब तक समाज में पाखंड, अन्याय, भेदभाव और अज्ञान मौजूद रहेगा, तब तक कबीर की वाणी मशाल की तरह हमारा मार्गदर्शन करती रहेगी। उनका अनुभव पर आधारित सत्य, उनका सहज मार्ग, और सभी प्रकार की पराधीनता से मुक्ति का उनका संदेश उन्हें हर युग का समकालीन कवि बना देता है। वे वास्तव में अतीत की एक ऐसी धरोहर हैं, जो वर्तमान के हर संकट में हमारा साथ देती है और भविष्य के लिए एक बेहतर समाज का मार्ग प्रशस्त करती है।

संदर्भ सूची:

1. अमृत संदेश कबीर वाणी, भक्त कवि कबीरदास, रजत प्रकाशन
2. वही
3. वही